आमोद कारखानिस

मामला आवाज़ें निकालने का

मैं एक नाटक देख रहा था। बगीचे का सीन था। बगीचे का दृश्य बनाने के लिए पीछे एक पर्दा लगा था और सामने बहुत सारे गमले थे। दृश्य को और वास्तविक बनाने के लिए पीछे से चिड़ियों का चहचहाना सुनाई दे रहा था। सोचने लगा, यह बगीचाना माहौल बनाने में कितनी मेहनत की होगी। शहर के बगीचों में चिड़ियों की इतनी स्पष्ट आवाज़ रिकॉर्ड करना कोई आसान काम नहीं है!

तारीफ किए बगैर मुझसे रहा न गया। जब मैंने अपने दोस्त को यह किस्सा सुनाया तो वो ज़ोर से हँसा और बोला, "तुम देखना (सुनना?) चाहते हो पक्षियों का चहचहाना? अन्दर आ जाओ।" अन्दर घुसा। कोई पक्षी नहीं, टेप रिकॉर्डर भी नहीं। बस एक साहब दूध की खाली बोतल और कॉर्क लिए बैठे थे। हमें देखते ही वे एक के बाद एक पक्षियों की आवाज़ें निकालने लगे।

तुम भी कोशिश करो

कांच की एक बोतल लो। उसके मुँह के पास चूड़ियाँ नहीं होनी चाहिए। बोतल के मुँह को हलका-सा गीला करो और उसपर कॉर्क रगड़ो। कभी ज़्यादा तो कभी कम दबाव से रगड़ने पर अलग-अलग आवाज़ें निकाली जा सकती हैं। थोड़ी प्रैक्टिस से तुम कई तरह की आवाज़ें निकाल पाओगे।

आवाज़ें निकालने का मामला यहीं खत्म नहीं होता!

फिल्मों में जो दिखता है अगर उतनी ज़ोर से लोग पिटते रहते तो यकीन मानो उनकी आधी ज़िन्दगी अस्पताल में ही कटती। पर यह ज़ोरदार एक्शन के साथ ज़ोरदार आवाज़ का ही कमाल है कि घूँसा ज़ोरदार लगने लगता है। सोचो, इसके लिए क्या किया जाता होगा? एक्शन सीन में सबकुछ इतना जल्दी होता है कि हम कहाँ जान पाते हैं कि घूँसा लगा कहाँ और आवाज़ कहाँ से आई। गरम पानी से सिकाई करने वाले बैग पर माइक्रोफोन के सामने घूँसे जड़ो और असर देखो। माइक्रोफोन भी क्या कमाल की चीज़ है। तिल-सी आवाज़ को ताड़ बना देता है। इसके सामने माचिस की डिब्बी को मुट्ठी में मसलो तो ऐसी आवाज़ आएगी ज़्यों पूरा-का पूरा सेट ही धराशायी हो गया हो।

तेज़ हवा में झूमते पत्तों की आवाज़ के लिए न हवा चाहिए न पेड़। बस, पन्नी के बैग को माइक्रोफोन के सामने ज़ोर से एक से दूसरी तरफ ले जाओ।

क्या हुआ? बारिश के मौसम का सीन है? कोई बात नहीं।

ज़रा इसे आज़माकर देखो

दूध की बोतल या कांच की कोई भी 500 मि.ली. की छोटे मुँह वाली बोतल लो। उसके मुँह के पास फूँक मारो। साँय-साँय की आवाज़ें आएँगी। बोतल में पानी डालते जाओ और अलग-अलग आवाज़ें सुनते जाओ। पानी का स्तर बदलने के साथ-साथ क्या आवाज़ें भी बदलती जाएँगी?

उस्ताद तबले पर कई आवाज़ें निकाल सकता है। बादलों की गड़गड़ाहट सुनाना उसके लिए कोई बड़ी बात नहीं। पर अगर हमारी ऊँगलियाँ तबले पर थिरकने की आदी ना हों तो? इसका पुख्ता इन्तज़ाम था पुराने थिएटरों में। वहाँ लकड़ी का खुरदरी सतह वाला बड़ा भारी ढलावदार पटिया होता था। उस पर से लुढ़कती धातु की भारी गेंद बादलों सरीखी ही गड़गड़ाहट पैदा करती है। धातु की ट्रे पर हाथ से चपत मारने पर निकली आवाज़ बादलों में बिजली चमकाने का काम करेगी।

दोनों चित्रः दिलीप चिंचालकर

अगर नाटक ऐतिहासिक युद्ध पर है तो तोपों की आवाज़ तो चाहिए ही होगी। है ना! तो क्या 26 जनवरी की परेड की तोपों की आवाज़ों को रिकॉर्ड करने तक रुकोगे? नहीं भाई, किसी खाली कचरे के डिब्बे में छूटा पटाखा भी तोप का काम कर सकता है।

हवा में पिस्तौल को लहराते हुए गोली दागनी है.... चिन्ता की क्या बात! चमड़े के तकिए को बाँस की छड़ी से पीटो क्या उम्दा आवाज़ आएगी! ऐतिहासिक नाटक से एक मज़ेदार चीज़ याद आई।

ज़रा इसे भी आज़माओ

प्लास्टिक के दो कपों को एक-एक हाथ में पकड़ो और उनके खुले सिरे आपस में टकराओ। क्या घोड़े को सरपट दौड़ा पाए या धीरे-धीरे चला पाए?

ऐसी कई तरकीबें हैं जिनसे नाटक में रंग भरा जा सकता है। नाटकवालों की पोल नहीं खोलूँगा। पर कई तरकीबें तुम भी सोच सकते हो। मान लो तुम्हारे नाटक में एक भुतहा घर है। सिया बन्द दरवाज़े को खोलती है। सदियों से बन्द दरवाज़ा चरमरा कर खुलता है। बाहर सियारों, कुत्तों की आवाज़ें आ रही हैं...। इतने में किसी के भारी कदमों से सीढ़ियाँ चढ़ने की आवाज़ आती है...। ये आवाज़ें निकालने के लिए क्या करोगे?

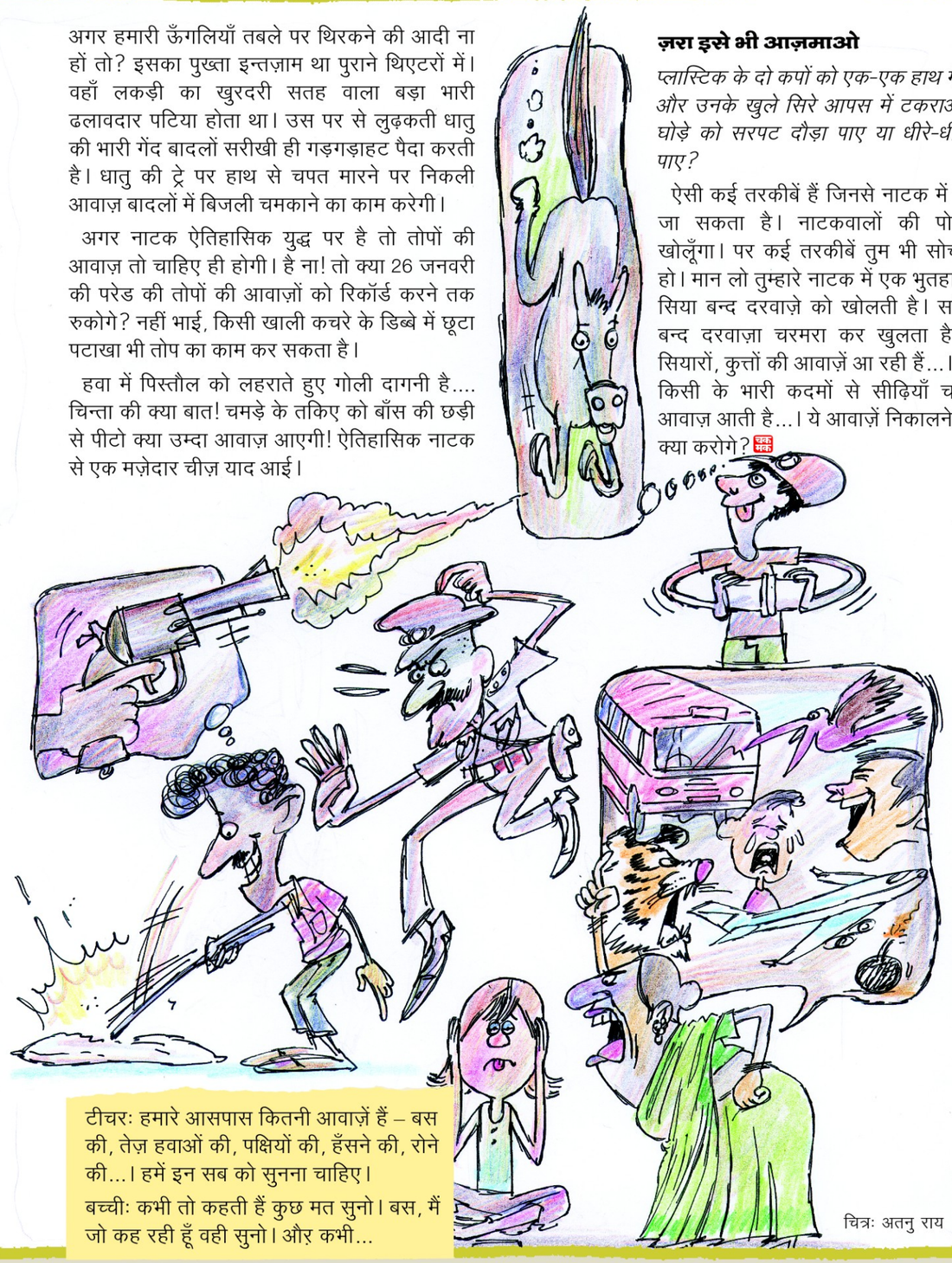

टीचरः हमारे आसपास कितनी आवाज़ें हैं – बस की, तेज़ हवाओं की, पक्षियों की, हँसने की, रोने की...। हमें इन सब को सुनना चाहिए।

बच्चीः कभी तो कहती हैं कुछ मत सुनो। बस, मैं जो कह रही हूँ वही सुनो। और कभी...

चित्रः अतनु राय